बिज़नेस स्टैंडर्ड
Friday, September 11, 2020 11:22 AM English | हिंदी

जापान में नेतृत्व परिवर्तन और भारत-जापान रिश्ते

श्याम सरन / September 10, 2020

शिंजो आबे ने बतौर जापानी प्रधानमंत्री आठ वर्ष का असाधारण कार्यकाल पूरा करने के बाद अपने पद से इस्तीफा दे दिया। इस दौरान वह सबसे लंबे समय तक पद पर रहने वाले जापानी प्रधानमंत्री बने। जापान में उन्हें ऐसे प्रधानमंत्री के रूप में याद किया जाएगा जिसने विस्तारवादी मौद्रिक नीति, लचीली राजस्व नीति और उत्पादकता बढ़ाने एवं वृद्धि बहाल करने वाले ढांचागत सुधारों के साथ अधिक अग्रसोची आर्थिक नीति तैयार की।

शायद वह ये सब नहीं हासिल कर पाते लेकिन जापान के लंबे समय तक चले आर्थिक ठहराव ने इसका अवसर प्रदान किया। कोविड-19 महामारी ने जापान की अर्थव्यवस्था को तगड़ा झटका दिया और अब इसमें सुधार के लिए शायद उसकी आवश्यकता पड़ेगी जिसे 'आबेनॉमिक्स' का नाम दिया गया। ऐसे में आशा की जानी चाहिए कि आबे की आर्थिक विरासत बरकरार रहेगी।

आबे के कार्यकाल में जापान एशिया और उसके बाहर कम लचीली शक्ति के रूप में उभरा। उन्होंने ऐसे क्षेत्र में अपने देश की हैसियत मजबूत की जहां चीन की ताकत तेजी से बढ़ रही थी।

उन्हें एक तनी हुई रस्सी पर चलना था जहां एक तरफ चीन था जिसके साथ जापान की अर्थव्यवस्था बहुत गहराई से जुड़ी हुई थी और दूसरी ओर अमेरिका था जिसके चीन के साथ तीव्र मतभेद थे लेकिन वह जापान समेत अपने ही सहयोगियों के साथ एक हद तक अप्रत्याशित और अस्थिर व्यवहार करने वाला था। आबे इन नाजुक हालात को संभालने में कामयाब रहे। परंतु कोविड-19 के बाद की बंटी हुई दुनिया में हालात और कठिन हो जाएंगे, ध्रुवीकरण बढ़ेगा और छोटी और बड़ी तमाम अर्थव्यवस्थाएं संरक्षणवाद की शरण में जाएंगी। आबे ने इस बदले आर्थिक माहौल से निपटने के क्रम में जापान को अपेक्षाकृत बेहतर परिस्थिति में छोड़ा है। उनके ही नेतृत्व में प्रशांत पार साझेदारी जैसा बड़ा क्षेत्रीय मुक्त व्यापार समझौता बच सका जबकि अमेरिका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने समझौते से दूरी बना ली थी। जापान क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी (आरसेप) में भी शामिल है जिसमें 10 आसियान देश, जापान, दक्षिण कोरिया, चीन, ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड शामिल हैं। भारत ने बातचीत के अंतिम चरण में आरसेप वार्ता से दूरी बनाकर जापान तथा अन्य आरसेप साझेदारों को निराश किया। भारत की चिंता यह थी कि चीन भारतीय बाजारों को सस्ती चीजों से पाट देगा। ऐसे में जापान एशिया की उभरती अर्थव्यवस्था और व्यापार ढांचे को आकार देने में अहम भूमिका निभाएगा।

इसका अर्थ यह हुआ कि टोक्यो में बनने वाली नई सरकार अमेरिका के उस रुख का साथ शायद ही दे जो चीन की अर्थव्यवस्था को अलग थलग करने का हामी है। हालांकि वह अपने बाह्य आर्थिक हितों को चीन पर अत्यधिक निर्भरता से परे और अधिक विविधतापूर्ण बनाएगा। भारत के नीति निर्माताओं को इसकी सराहना करनी चाहिए क्योंकि यहां ऐसी अतिरंजित धारणा है कि जापान की पूंजी चीन से बाहर निकलना चाहती है और भारत उनके लिए एक वैकल्पिक केंद्र है। आबे क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव को लेकर अत्यधिक सतर्क थे और उन्होंने जापानी उद्योग और व्यापार जगत को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया कि वे भारत को विकल्प के तौर पर देखें। भारत ने उन्हें निराश किया और बीते कुछ वर्षों में चीन में जापान की रुचि बढ़ी। आबे के उत्तराधिकारी शायद इस क्षेत्र में कूटनयिक और सुरक्षा भूमिका में विस्तार और सक्रियता को लेकर उतनी रुचि न रखें।

भारत के साथ साझेदारी को लेकर रुचि भी कम हो सकती है। जब भारत ने चीन की बेल्ट और रोड पहल (बीआरआई) में शामिल होने से इनकार किया था तब जापान ने भी दूरी बरती थी। बहरहाल, फिलहाल जापान बीआरआई परियोजनाओं में चीन के साथ सहयोग और प्रतिस्पर्धा दोनों कर रहा है। सन 2016 में जोरशोर से घोषित भारत-जापान-अफ्रीका कॉरिडोर परियोजना अब कहीं नजर नहीं आ रही। भारत-जापान सामरिक साझेदारी का आर्थिक स्तंभ कमजोर है और आबे के बाद यह और कमजोर हो सकता है।

आबे के कार्यकाल में सबसे अधिक सुधार भारत-जापान सुरक्षा रिश्तों में हुआ। अगस्त 2007 में बतौर प्रधानमंत्री उनके पहले और छोटे कार्यकाल की भारत यात्रा के दौरान आबे ने दो सागरों के मेल की बात कही थी जो बाद में मुक्त और खुले हिंद-प्रशांत क्षेत्र की अवधारणा बनी। उन्होंने हिंद प्रशांत क्षेत्र में लोकतांत्रिक देशों के नए शक्ति संतुलन की संभावना पहचान ली थी। उनकी पहल पर ही भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया ने मनीला में 2007 में बैठक की लेकिन अमेरिका ने बाद में ईरान और उत्तर कोरिया के परमाणु मसले पर चीन और रूस का समर्थन गंवाने के डर से ऐसा नहीं होने दिया। सन 2017 में आबे ने भारत को सहमत कर इसमें नई जान फूंकी क्योंकि वह सुरक्षा साझेदार के रूप में भारत की भूमिका को लेकर आश्वस्त थे। अब दोनों देशों के विदेश और रक्षा मंत्री साल में दो-दो बार मिलते हैं और आपसी सहयोग बढ़ा है। दोनों देशों के बीच अगली बैठक में रक्षा सुविधाओं को लेकर द्विपक्षीय अधिग्रहण और क्रॉस सर्विसिंग समझौता होने की आशा है। यह कहना होगा कि आबे के कार्यकाल में दोनों देशों के सुरक्षा रिश्ते तेजी से विकसित हुए। देखना होगा कि टोक्यो का नया सत्ता प्रतिष्ठान उसी ऊर्जा और उत्साह से काम करता है या नहीं। सन 2017 के भारत-जापान नाभिकीय समझौते में आबे की व्यक्तिगत भूमिका को भी कम नहीं आंकना चाहिए। भारत-अमेरिका नाभिकीय समझौते के बाद यही सबसे मजबूत समझौता है। परंतु कम ही लोगों को मालूम होगा कि आबे ने भारत को परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह में रियायत दिलाई थी। सन 2007 में मैं विशेष दूत के रूप में टोक्यो गया था और तत्कालीन जापानी विदेश मंत्री तारो असो से मुलाकात की थी। औपचारिक बैठक में उन्होंने अधिकारियों द्वारा दिया गया अपेक्षाकृत कड़ा और हतोत्साहित करने वाला वक्तव्य पढ़ा। बहरहाल उन्होंने लिफ्ट में मुझसे कहा कि मैं भारतीय प्रधानमंत्री को जापानी प्रधानमंत्री आबे का यह संदेश दे दूं कि एनएसजी में जापान भारत का समर्थन करेगा। इसने हमारी बहुत मदद की।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और आबे के बीच भी काफी करीबी रिश्ता रहा जिससे दोनों देशों की सामरिक साझेदारी को गति मिली। यह स्पष्ट नहीं है कि आबे का उत्तराधिकारी कौन होगा लेकिन भारत के लिए यह आवश्यक है कि वह नए नेता के साथ जल्द से जल्द तालमेल कायम करे। भारत और जापान का रिश्ता भारत के आर्थिक और सुरक्षा हितों की दृष्टि से अहम है।

(लेखक पूर्व विदेश सचिव और सीपीआर के सीनियर फेलो हैं)

Keyword: नेतृत्व परिवर्तन, भारत-जापान, शिंजो आबे, चीन, इस्तीफा, प्रधानमंत्री, ढांचागत सुधार, ध्रुवीकरण,